इतवार

[ख़र्राटों की आवाज़, घड़ी आठ बजाती है। उसके बाद फिर
ख़र्राटों की आवाज़, क़दमों की चाप, बीवी आती है।]

पत्नी—लो और सुनो, अब तक पड़े हुए ऐंठ रहे हैं। तमाम सिर पर धूप है और नींद तो कोई देखे कैसी ग़फ़लत की है जैसे घोड़े बेच के सोये हैं। ऐ मैं कहती हूँ कि उठते हो कि नहीं···सुना तुमने ?···ऐ उठो मुई दुपहर होने को आई।

पति—ऊँ···उँह···आख़···ख़ाह। लाहौल वल क़ूव्वत · सोना हराम कर दिया है।···

पत्नी - तो क्या बस सोये जाओगे आज ? मण्डी भी मुई बन्द हो जायगी और सब काम फिर पड़े रह जायेंगे।

पति—तोबा है साहब आज इतवार के दिन भी नींद भर के सोने नहीं दिया जाता।

पत्नी—अच्छा तो तुम सोओ। मगर मैं भी लकड़ियों की तरह अपने हाथ-पैर चूल्हे में न जलाऊँगी। आटा तक तो घर में ख़त्म हो गया है। हफ़्ता भर तो इतवार का आसरा देखा जाये और इतवार के दिन तुम पड़कर ख़र्राटे लो। तो क्या मैं घर के बाहर निकल जाऊँ ? थोड़ी देर में नन्ही और उसके दूल्हा आते होंगे। तुमको पड़के सोना ही था तो बुलावा क्यों दे बैठे ?

पति—अच्छा साहब, उठता हूँ ज़रा। तुम्हारी चीख़-पुकार में तो अँगड़ाइयाँ लेना भूल गया। ख़ुदा ख़ैर करे, कच्ची नींद उठा हूँ दिन भर सर में दर्द रहेगा।

पत्नी—रोज़ छः बजे दफ़्तर जाते हो तब सर में दर्द नहीं होता ? हाँ इतनी देर धूप में पड़े सिकते रहे हो, दर्द हो जाय तो क्या ताज्जुब है। मुई दो मरतबा चाय गरम की गई और मिट्टी हो गई।

पति—तो आख़िर क्या बज गया है जो ज़मीन-आसमान एक किये

देती हो ? मुझे ख़ुद आज सैकड़ों काम हैं; मगर इतवार के दिन ज़रा इत्मीनान से सोने को दिल चाहता ही है।

पत्नी—ख़ैर तुम मेरे काम कर दो। उसके बाद चाहे अपने काम करो या पड़के सो रहो, मुझ से कोई मतलब नहीं।

पति—नहाना एक, अरे तौबा ! पहले बाल बनवाना दूसरे नहाना। तीसरे आज इरादा है कि बहुत-से ख़त पड़े हुए हैं जवाब दे दूँ। फिर, फिर ठीक है आज ब्रिज उड़ेगी गोपी के यहाँ। सब वहीं जमा होंगे और फिर सिनेमा···

पत्नी—और घर का जो काम है वह गया चूल्हे में। गेहूँ ख़रीदकर पनचक्की भिजवाना। किसी बच्चे के पास गत के कपड़े नहीं हैं। तुम्हीं ने कहा था कि इतवार के दिन कपड़े लाऊँगा। नन्हीं की आँखें डाक्टर को दिखाने के लिए तुम्हीं ने कहा था। वह थोड़ी देर में आती ही होंगी अपने दूल्हा के साथ। क़मर का हाल भी कहना है डाक्टर से। और देखो, मैंने कह दिया है कि आज अगर मिट्टी के तेल का पीपा न आया तो रात को चिराग़ में बत्ती भी न पड़ेगी।

पति—और कुछ याद कर लीजिये। अब तो सिर्फ़ तीन-चार दिन ही का काम आपने फ़रमाया है। दिन भर तो पनचक्की के नज़र हो जायगा, फिर नहाऊँगा क्या अपना सर ? तमाम हफ़्ते इतवार का इन्तेज़ार किया था कि ज़रा दोपहर को ख़स की टट्टी छिड़क कर सोयेंगे तो आपने मिट्टी का तेल छिड़ककर मर रहने की तरकीब बता दी।

पत्नी—मैं कहती हूँ कि आख़िर फिर मैं क्या करूँ ? मेरे पास कौन से नौकर-चाकर हैं जो यह सब काम करें। एक मुआँ बोरा-सा लड़का है कि शलजम मँगाओ तो कद्दू उठा लाये। कल ही निगोड़े मारे से मिट्टी के तेल के लिए समझा के कह दिया था, वह मुआँ चँबेली का तेल उठाकर ले आया। अब कहो तो उससे यह सब काम कराऊँ ?

पति—तो मतलब तुम्हारा यह है कि हर रोज दफ़्तर की चक्की पीसूँ और इतवार के दिन भी घनचक्कर की तरह नाचता फिरूँ।

पत्नी—अच्छा तो तुम कहो तो मैं ही बुर्क़ा पहन कर निकलूँ घर के बाहर ?

पति—अब ये ताने शुरू हुए। कभी तो मुझ कम्बख़्त कोल्हू के बैल के साथ भी तुमने हमदर्दी की होती। अच्छा, अगर मैं मर जाऊँगा तो घर का काम कौन करेगा ?

पत्नी—ख़ुदा न करे, दुश्मन मुद्दई। मैं कहती हूँ कि आख़िर यह मुई कौन सी ज़बान है तुम्हारी ?

पति—मारे तो डालती हो और मरने का ज़बान से नाम लिया तो चलीं वहाँ से दुश्मन मुद्दई करने। अच्छा साहब फ़र्माइये क्या-क्या आयेगा ? नहाना-धोना सब गया जहन्नुम में। अब मेरा मुँह क्या तक रही हो, ज़रा काग़ज़, क़लम, दवात लेकर सब चीज़ें लिख दो तो दफ़ान हूँ मैं यहाँ से। यह आख़िर किधर गया कलुआ ? कलुआ ! [ज़ोर से पुकारता है] ओ कलुआ के बच्चे !

कलुआ—[दूर से] आ रहा हूँ मियाँ। [आता है।] मैं नहा रहा था मियाँ।

पति—'बाग़ के मजदूर ही अच्छे रहे शद्दाद से'। आप नहा रहे थे। उठा के ला क़लमदान वहाँ है।

कलुआ—जी हाँ।

पति—अबे जी हाँ क्या ? खड़ा हुआ सर हिला रहा है। क़लमदान उठा के ला।

पत्नी—जिससे लिखते हैं वही उठा ला मुँए पागल। [कलुआ जाता है।]

पति—यह नौकर मिला है जानवर कहीं का। तमाम बातें क़िस्मत ही से होती हैं। उन्हीं के यहाँ का नौकर कितना अच्छा है।

पत्नी—नन्हीं के यहाँ की न कहो, वहाँ नौकर पर क्या है तमाम काम तो नन्हीं के दूल्हा ख़ुद ही कर लेते हैं। ज़रा-ज़रा सी बात की उनको फ़िक्र रहती है। क्या मजाल कि वक़्त पर कोई काम न हो।

पति—बस दुनिया भर में एक नामाक़ूल अगर हूँ तो मैं। यही मतलब है न तुम्हारा ?

पत्नी—यह तो ख़ैर मैंने नहीं कहा। मगर तुम हो तो बे-परवाह ज़रूर।

पति—इसी को बे-परवाह कहते हैं ? मैं बे-परवाह हूँ ! यही मेरी बे-परवाही है कि रोज दफ़्तर में मरा करता हूँ और इतवार के दिन पैरों में सनीचर बाँधकर सुबह से शाम कर देता हूँ।

पत्नी—अच्छा ख़ैर, तुम तो इस वक्त बेबात की बात पर लड़ने को तैयार हो। [कल्लू आता है।] अरे मुँए, यह क्या उठा लाया ? यह क़लमदान है, इसी से लिखा जाता है ?

पति—स्लेट लाया है गधा कहीं का। ला मेरे सर पर दे मार अब इसे। खड़ा हुआ मेरा मुँह देख रहा है।

कलुआ—सरकार लिखने के लिए।

पति—अबे चुप, लिखने का बच्चा। यह भी किसी मर्ज़ की दवा नहीं।

पत्नी—दिन भर मुँआ इसी तरह भौंकवाता है जैसे मुँआ भेड़िये के भिट से निकला है। आदमी तो किसी तरफ़ से मालूम नहीं होता। अरे कम्बख़्त वह जो है नहीं लम्बा-सा सन्दूक़चा, हमाम में रखा होगा।

पति—[बात काटकर] सुभानअल्लाह ! क्या हुस्ने-इन्तेज़ाम है। बे-परवाह मैं हूँ और क़लमदान रखा जाता है आपके यहाँ हमाम में। ग़ुस्ल फ़र्माती होंगी आप लिखने की मेज़ पर बैठ कर ? इसी का नाम है—अन्धी नगरी चौपट राज।

पत्नी—धोबी को कपड़े बटोर-बटोर कर दे रही थी, वहीं मैंने कहा

लिखती भी जाऊँ। इस मुँए से कहा था कि क़लमदान उठा लेना, मगर यह तो है जानवर।

कलुआ—अच्छा वह क़लम और स्याही का डिब्बा। हम भी कहें कि क़लमदान क्या चीज! [दौड़ता है।]

पति—जंगली कहीं का। इतने दिन हो गये और क़लमदान तक नहीं पहचानता? अब आप मेहरबानी फ़र्माकर काग़ज़ तो उठा लाइये। नहीं तो वह ख़ुदा जाने सूप उठा लाये या छलनी···।

[पत्नी जाती है, पति बड़बड़ाता है।] यह इतवार है हमारा! तमाम दिन बाजार के चक्कर लगेंगे; दिन भर की धूप सर से गुज़रेगी। लू लगेगी मगर मौत फिर भी न आयेगी। [चीखता है।] अब ला भी चुको काग़ज़-वाग़ज़! [बेगम तेजी से आती है।]

पत्नी—ला तो रही थी, देखो काम का काग़ज़ तो नहीं है।

पति—हाँ, हाँ अब जेल भी भिजवा दो। तुम से दफ्तर का बस्ता टटोलने को किसने कहा था कि सब सरकारी काग़ज निकाल लाईं। भई नाल्का बन्द कर रखा है तुम लोगों ने तो। कलुआ की सोहबत में तुम भी देख लेना मोज़े की जोड़ी की जगह इंशाअल्लाह उगालदान उठा लाया करोगी।

पत्नी—ऐ ख़ुदा न करे मेरा दिमाग़ ऐसा ख़राब हो जाये। मैंने तो यह देखकर कि इस काग़ज पर बस एक सतर लिखी हुई थी, निकाल लाईं इसे।

पति—जी हाँ, इस एक सतर में एक हज़ार रुपये का हिसाब लिखा हुआ है। रखिये इसे वहीं और कोई बेकार-सा काग़ज लाइये ना किसी कापी-वापी में से निकाल कर।

[कलुआ आता है।]

कलुआ—यह है मियाँ वह जिसको आपने कहा था, जाने क्या कहा था?

पति—जी हाँ, यही है। अब अगर भूला कि इसका नाम क़लमदान है तो मारते-मारते उल्लू बना दूँगा। क्या है बोल ?

कलुआ—यह···क़लम···और···।

पति—क़लमदान। कहो क़लमदान।

कलुआ—क़लमदान।

पति—अब न भूलना। [बेगम काग़ज लेकर आती है।] आइये अब जल्दी से। न चाय-पानी यह हमारा इतवार आया है। खुदा की मार ऐसी छुट्टी पर !

पत्नी—ऐ है ! इस आफ़त में मुझको सचमुच खयाल ही न रहा। चल तो कलुआ, जरा पानी चूल्हे पर रखदे।

पति—पानी रखदे ! अब दोपहर को चाय मिलेगी ! ख़ैर, अब आप लिखवाइये तमाम चीजें।

पत्नी – लिखो बीस सेर गेहूँ।

पति—बीस सेर गेहूँ ? ये एक हफ्ते के हुए गोया। ये हम लोग आदमी हैं या पनचक्की हैं, आखिर मामला क्या है ?

पत्नी—एक हफ्ते के क्यों हुए और ज्यादा चलेंगे। अगर मैंने लिखवा दिये यूँ ही वक्त-बेवक़्त के लिए।

पति—अच्छा साहब, लिखवाइये और कुछ वक़्त-बेवक़्त के लिये हूँ।

पत्नी—चना लिखो पाँच सेर।

पति—चना पाँच सेर ! इस घर में घोड़े भी बसते हैं ?

पत्नी—तौबा है, दालवाल के लिए चाहिये थे। बेसन घर में बिल्कुल नहीं है। माश और अरहर की दाल दो-दो सेर; मूँग की दाल आध सेर; खड़ी मसूर आध सेर।

पति—अब जरा ठहर जाइये। क़लम आपकी जबान से बंधा हुआ तो है नहीं, मेरे हाथों में है। माश और अरहर की दाल दो-दो सेर यानी दो सेर यह और दो सेर वह।···और···।

पत्नी—मूँग की दाल आध सेर; खड़ी मसूर आध सेर।

पति—अच्छा साहब, आध सेर। और ?

पत्नी—दली मसूर आध सेर; खड़े माश आध सेर; खड़े मूँग आध सेर।

पति—और भी कुछ दालें बाक़ी है ?

पत्नी—बड़ियाँ मूँग की पाव भर, बड़ियाँ माश की पाव भर।

पति—देखो कुछ रह न जाये अज क़िस्मे ग़ल्ला।

पत्नी—नहीं, बस यह ख़तम।

पति—ख़ैर शुक्रिया आपका, तो बरा ?

पत्नी—अब मसाला लिखो—हल्दी, धनिया, खटाई, मिर्च, नमक।

[दरवाजे पर दस्तक]

पति—कौन है भई कलुआ ? [आवाज़ देता है।] अबे ओ कलुआ ! देख ज़रा बाहर कौन है ?

पत्नी—कहीं नन्हीं और उनके दूल्हा तो नहीं आगये, ज़रा देखना तो क्या बजा है ?

पति—दस बजने में दस मिनट। [कलुआ आता है।]

कलुआ—मियाँ वह हैं, क्या नाम है उनका। देखिये वह।

पति—अबे क्या नाम है बोल जल्दी ?

नवागन्तुक—भाई साहब, मैं हूँ अज़ीज़।

पत्नी—अज़ीज़, नन्हीं के दूल्हा।

पति—लाहौलवला क़ूवत ! [आवाज़ देकर] आ जाओ ना भाई, तुम्हारा इन्तेज़ार ही था।

[अज़ीज़ और नन्ही का प्रवेश]

अज़ीज़—आदाब अर्ज़ भाई साहब, तसलीम आपा।

पति—जीते रहो, इधर निकल आओ अज़ीज़ मियाँ।

पत्नी—आओ नन्हीं तुम मेरे पास आ जाओ। ले कलुआ ताँगे वाले को किराया दे आ। [कलुआ जाता है।]

अजीज़—कहिये आज तो इतवार है। जब ही इत्मीनान से बैठे हैं।

पति—हाँ, यानी नहीं भई कुछ काम कर रहा था और इनको भी कुछ जिन्स वग़ैरह मँगानी थी।

अजीज़—अच्छा तो यह कहिये आज घरदारी हो रही है।

पति—घरदारी क्या हो रही है, जान अज़ाब में है। हफ़्ते भर के बाद छुट्टी का एक दिन मिले और वह भी इस झक-झक के नज़्र हो जाये। नोन, तेल, लकड़ी—आदमी न हुए घनचक्कर हो गये।

अजीज़—ओहो! आप तो घर के कामों से सख़्त आजिज़ मालूम होते हैं।

पति—यानी ये आजिज़ होने की बातें हैं।

नन्हीं—दूल्हा भाई हमारे घर के कामों से हमेशा आजिज़ रहे।

अजीज़—यह असल में तरबियत की बात है।

पति—क्या मतलब? यानी तरबियत कैसी?

अजीज़—मेरा मतलब यह है कि आपको शुरू ही से घर के मामलात से बेगानगी रही होगी।

पत्नी—हमेशा से यही हाल है इनका।

पति—ये घर के सब काम गोया कोई आके कर जाता है।

अजीज़—ख़ैर काम तो किसी-न-किसी तरह हो ही जाता है; मगर आप तो इस वक़्त सख़्त परेशान मालूम होते हैं।

पत्नी—अभी तो सोके उठे हैं। मुँह भी नहीं धोया।

अजीज़—अच्छा, अब उठे हैं दस बजे?

पत्नी—हाँ कोई घण्टा-भर हुआ होगा। उसी की परेशानी है और चिड़चिड़े हो रहे हैं।

पति—फिर वही। अरे साहब, चिड़चिड़ा इसलिए हो रहा हूँ क़लम-दान माँगो तो नौकर साहब स्लेट उठाकर लायें। क़लमदान ढूँढा जाय तो वह मिले हमाम में।

नन्हीं—क्या कहा हमाम में ?

पति—जी हाँ, आपकी हमशीरा-ए-मुअज्जम जो हैं ना उनका दफ़्तर वाक़े हुआ है हमाम शरीफ़ में।

अजीज—साहब, यह हमाम में क़लमदान की एक ही रही।

नन्हीं—हमारे यहाँ तो ऐसी कोई बेतुकी बात हो जाय तो यह सारा घर सर पर उठालें।

अजीज—हाँ बेशक। मैं तो यह नहीं देख सकता कि क़लमदान हमाम में हो और साबुनदानी लिखने की मेज पर।

पति—यही तो मैं भी चीख़ रहा हूँ कि आखिर इस घर का नक़्शा क्या है ?

पत्नी—अब चले हैं यहाँ से बातें बनाने ! गुस्सा इस पर है कि साढ़े आठ बजे मैंने सोते में उठा क्यों दिया। इतवार था तो दिन भर सोने देती।

पति—अच्छा, ख़ैर यही सही। तो भी मेरा कौन सा क़ुसूर हुआ ? क्यों भई अजीज, क्या छुट्टी के दिन आराम करने को तुम्हारा दिल नहीं चाहता ?

अजीज—जी हाँ, दिल क्यों नहीं चाहता। मगर आराम यही है कि दफ़्तर के काम से निजात मिल जाती है और अपने बाल-बच्चों में इन्सान रहता है और अपने घर के काम करता है।

पति—ख़ैर, ख़ैर। मतलब यह कि अगर वह जरा ज्यादा सोये तो आखिर कौनसा जुर्म है ?

अजीज—यह तो छुट्टी क्या मानी आँधी आये, पानी बरसे कुछ भी हो पाँच बजे टहलने जरूर चले जाते हैं।

पति—पाँच बजे ? तो भई तुम इलाज क्यों नहीं करते ? यह दिमाग़ की ख़ुश्की कोई अच्छी चीज तो है नहीं।

पत्नी—लो, और सुनो। बस यही इनकी बेतुकी बातें होती हैं।

अजीज—यह दिमाग की ख़ुश्की की एक ही रही। मैं तो बचपन से अँधेरे मुँह उठने का आदी हूँ।

पति—तो मतलब यह कि तुमको इतवार के दिन कम-से-कम यह चक्की तो पीसना नहीं पड़ती। तुम अपने इत्मीनान से यहाँ तक चले तो आये मियाँ-बीवी। और एक मैं हूँ कि आज इंशाअल्लाह दम मारने की मुहलत न मिलेगी।

अजीज—तो क्या यह सब काम आप महीने के पहले इतवार को नहीं कर लेते ?

पत्नी—तौबा करो। इनको इतवार के दिन सोने या दोस्तों में ताश खेलने से ही कब फ़ुर्सत हुई है ?

अजीज—ताश ?

नन्हीं—क्या दूल्हा भाई ताश भी खेलते हैं ?

पति—ताश नहीं तो अपना सर खेलता हूँ। कभी दोस्त-अहबाब में बैठकर एक-आध घण्टा ब्रिज हो गया तो उसका नाम रखा गया है ताश।

नन्हीं—इनको तो इस क़िस्म की बातों से जैसे नफ़रत ही-सी है बिल्कुल।

पत्नी—ऐ है, बस यही न कहना नहीं तो अभी बिगड़ जायेंगे। मैंने तो मुँए इस मनहूस खेल के लिए कहना ही छोड़ दिया है।

पति—कम-से-कम तुमने नन्हीं से यही सबक लिया होता कि यह कभी अपनी क़िस्मत का रोना तुम्हारी तरह नहीं रोती। अब की उसमें अपने मियाँ की तारीफ़ ही की है। मुझे तो सच पूछो अजीज की क़िस्मत पर रश्क है।

पत्नी—तुम अज़ीज़ की क़िस्मत पर रश्क करो। मगर मैंने आज तक नहीं कहा कि मुझको नन्हीं की क़िस्मत पर रश्क है, हालाँकि अगर मैं कहती तो कुछ झूठ भी न था। पहले कोई अज़ीज़ का जैसा सुगढ़ तो होले।

पति—और मुझमें तो सैकड़ों ऐब हैं। मसलन इतवार के दिन ज़रा सो रहता हूँ। मसलन अगर दोस्तों ने मजबूर किया तो ज़रा ताश खेल लेता हूँ। हाँ मुझको लगी लिपटी बातें करना नहीं आतीं जैसी आम तौर पर शौहर किया करते हैं बीवियों के साथ। मगर मुक़द्दर को क्या करूँ? अच्छा खैर, लाइये वह कहाँ गई आपकी फ़ेहरिस्त?

पत्नी—अभी इसमें कुछ लिखा भी गया है। बस दालें और गेहूँ ही तो लिखे गये हैं।

नन्हीं—और दूल्हा भाई, मेरे लिए चश्मे का भी आपको इंतेज़ाम करना है आज ही। आँखें बिल्कुल ख़राब होकर रह गई हैं। आपके दोस्त वह डाक्टर किस वक़्त मिलेंगे?

पति—वह······वह इस वक़्त कहाँ? मज़े में ब्रिज उड़ा रहे होंगे और मुझे कोस रहे होंगे। आज इतवार का दिन है वह मेरी तरह घर के ख़िदमतगार तो हैं नहीं।

अज़ीज़—तो उनसे कोई और वक़्त मुक़र्रर कर लिया जाये ना।

पति—भई अगर इस वक़्त उन्होंने मुझे देख भी पाया तो बस पकड़ लेंगे ताश खेलने के लिए। और सब काम धरा रह जायगा। शाम को जाऊँगा उनके पास। इस वक़्त तो इस झगड़े को निपटा लेने दो। कहाँ लग गईं? बताओ न चीज़ें मेरे कफ़न-दफ़न की।

नन्हीं—ख़ुदा न करे दूल्हा भाई! आप तो सचमुच औरतों की तरह कोसने भी सीखते जाते हैं।

अज़ीज़—भई ख़ुदा का शुक्र है कि हमारे घर में यह क़यामत बरपा नहीं होती।

पत्नी—तुम्हारे यहाँ गया दुनिया जहान में न होती होगी। अब तुम ही बताओ कि क्या मैं घर के बाहर निकल जाऊँ ? इन सब कामों के लिए नौकर रखा तो मुँआ ऐसा—वह देखो ! देख रही हो नन्हीं ? मुँआ चूल्हे के पास बैठा इस गर्मी में ऊँघ रहा है।

पति—तो यह भी मेरा क़ुसूर है ? ऊँघ रहा है, ऊँघ रहा है नौकर। और उसकी जिम्मेदारी भी मेरी ही गर्दन पर है, मैं सच कहता हूँ कि इस घर में अब जहन्नुम का मजा आने लगा है।

अजीज़—भई हमारा घर तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से जन्नत है।

पति—बात यह है कि तुम को मिली है नन्हीं की-सी बेजबान बीवी।

पत्नी—नन्ही को मिला है अजीज़ का-सा फ़रिश्ता शौहर।

पति—और तुमको मैं शैतान मिला हूँ गोया—लाहौलवलाक़ूवत।

नन्हीं—[हँसकर] दौड़िये भी तो दूल्हा भाई।

पति—क्या बात, क्या कहा ?

अजीज़—[हँसकर] बड़ी शरीर हो। [फिर हँस कर] इनका मतलब है लाहौल से शैतान भागता है तो आप भी भागिये ना।

पति—मैं सच कह रहा हूँ कि वह मैं ही था जिसने इन मुसम्मात के साथ निबाह करके दिखा दिया। कोई शौहर तो शौहर बैल भी इतना काम नहीं कर सकता जितना मैं कर लेता हूँ। और फिर सुस्त का सुस्त और बेपरवाह।

पत्नी—अच्छा तो अब तुम ही फ़ैसला करो अजीज़ मियाँ, कि मैं इन बातों के लिए आख़िर किससे कहा करूँ ? जो यह सवेरे से जुजबुजा हो रहे हैं और बात-बात पर कोसा-काटी हो रही है।

पति—अजी छोड़ो यह फ़ैसला-वैसला ! फ़ैसला होगा अब क़यामत में। तुम तो मुझे बताओ कि और क्या-क्या काम हैं ! धूप बढ़ रही है। आज दिन भर भूखा-प्यासा फ़ाक़े से लू के थपेड़े खाऊँगा। यह है हमारा इतवार, मनहूस कहीं का। यह छुट्टी मिली है हमको, छिः !

पत्नी—तो तुम रहने दो । मैं उसी कलुआ को भेजकर नन्हीं के यहाँ से ग़फ़ूर को बुलवाये लेती हूँ। वह ला देगा, तुमने तो नाहक़ की आफ़त मचा रखी है।

अज़ीज—अरे साहब, मैं हाज़िर हूँ। मगर भाई साहब, यह है बड़ी बुरी बात कि आप घर के काम से घबराते हैं।

पति— यानी अजीब दिमाग़ के आदमी हो तुम भी । घबरा कौन नामाकूल रहा है, मगर ज़रा कामों की फ़ेहरिस्त तो देखो। और यह इतवार का एक दिन देखो। मियाँ, ख़ते-गुलामी लिखवालो जो इतना काम एक दिन में कोई माई का लाल कर दे। चले हो तुम वहाँ से बातें बनाने।

नन्हीं—दूल्हा भाई, उनका मतलब तो यह है कि वह अपना ही जैसा सब को समझते हैं कि क्या मजाल जो दो घड़ी आराम भी करलें। यह चीज रख वह उठा, यह झाड़, वह झाड़ । बस दिन भर यही सब किया करते हैं।

पत्नी—घर इसी तरह बनता है। हमारे यहाँ की तरह थोड़ी कि यह देखो महीनों से यह मुँआ लोटा टपक रहा है, अब तो निगोड़ा मारा फ़ौवारा होगया है अच्छा ख़ासा। कहते-कहते ज़बान थक गई कि क़लई-गर को देकर मिस्सी जोश करादो।

पति—अब शिकायतों के दफ्तर खोल के बैठोगी या सौदा बताओगी लाने के लिए? ये शिकायतें तो जिन्दगी भर हैं। ख़ुदा मुझे मौत भी तो नहीं देता।

पत्नी—लो देखलो, यह है ज़बान।

अज़ीज—तौबा, तौबा!

नन्हीं—नौज बीबी।

पति—यानी आप हज़रात के नज़दीक भी क़ुसूरवार हूँ तो मैं ही? सच है घुटने पीठ ही की तरफ़ झुकते हैं। अच्छा साहब, मेरा ही क़ुसूर

है, मैं तो खतावार हूँ। गोली मार दीजिये आप सब मिलकर। इतवार तो ग़ारत कर ही दिया और मैं तो अब रात को भी जो सो जाऊँ तो जो चोर की सजा वह मेरी।

अजीज़—भाई साहब, आपको मालूम है कि इस वक़्त आपको ग़ुस्सा क्यों आ रहा है।

पति—जी हाँ, मालूम है। मैं घास खा गया हूँ इसलिए आ रहा है। दूसरे मैं आपकी तरह का फ़रिश्ता नहीं हूँ, इन्सान हूँ।

अजीज़—जी नहीं, आपको ग़ुस्सा इसलिए आ रहा है कि एकदम से सब काम आज ही आप पर पड़ गया है। अगर हफ़्ता भर थोड़ा काम आप करते रहते तो आज यह बार न होता। और मेरी तरह आज आपको भी छुट्टी होती।

पत्नी—नहीं, रोज तो यह होता है कि दफ़्तर से आये और थक कर पड़ रहे। अब क्या मजाल जो उनको कोई उठाले किसी काम के लिए। इस मुँए इतवार का इन्तेज़ार करती हूँ जो आज है और यह आफ़त मचाये हुए हैं।

पति—भई मैं अपना सर पीट लूँगा। आख़िर आफ़त क्या मचाई है मैंने? यूँ बदनाम करना है तो दोनों से क्या कह रही हो, ढिंढोरा पीटो शहर में। इतवार मेरा ग़ारत हुआ या तुम्हारा? तुम्हारा क्या है तुम्हारे काम तो हो ही जायेंगे। अलबत्ता मेरे सब काम गये अब सात दिन के लिए।

अजीज़—यानी आपके भी कुछ काम थे अभी?

पति—देख रहे हो मेरी सूरत, रीछ होने के क़रीब पहुँच गया हूँ। उस इतवार को बेगम साहब का हुक्म हुआ था कि ख़ालू अब्बा के यहाँ चलो, लिहाज़ा हजामत नदारद। आज का इतवार यूँ जा रहा है। ग़ुस्लख़ाने की ज़्यारत पन्द्रह दिन से नहीं हुई है। यूँ ही कपड़े बदल

लेता हूँ इरादा था कि आज जरा सिनेमा देखूँगा, मगर ये तमाम बातें होती हैं मुक़द्दर से ।

नन्हीं—दूल्हा भाई की भी बातें सचमुच······[हँसती है ।]

पति—हँस रही हो नन्हीं ? मैं सच कह रहा हूँ कि इस जिन्दगी से तो मौत बेहतर है, फिर तुम कहोगी कि···

अजीज—भाई साहब, हँसी की तो बात ही है आपने जो मसायब अपने बयान किये हैं, उनसे कलेजा शक़ ज़रूर होता है मगर सवाल यह है कि उसकी जिम्मेदारी बाजी पर क्यूँकर हुई ? क्या वही आपकी हजामत भी बना दिया करें ?

पति—भई, तुम्हारी यही हठधर्मी जहर लगती है । हजामत न बना दिया करे मगर मुहलत तो दिया करें मुझ बदनसीब को ।

पत्नी—और तो जैसे तुम्हें पकड़े बैठी ही रहती हूँ ।

अजीज—न, न, न इसको यूँ समझिये कि देखिये मैं भी सरकारी मुलाजिम हूँ, मगर हजामत बनाता हूँ और सिर्फ़ इतवार को नहीं बल्कि रोज बनाता हूँ । इसके अलावा यह तो आपको मालूम ही है कि मेरे बीवी भी है और आपकी बुआ से सब वही उज्र हैं जो आपको हो सकते हैं, मगर······

पति—भई, कह तो दिया कि मैं ख़तावार हूँ, कमीना हूँ, मरदूद हूँ । अब बख्श भी दो मुझको । यानी आप सब-के-सब एक तरफ़ हो गये गोया ख़ता है तो बस मेरी ।

नन्हीं—नहीं दूल्हा भाई, बात यह है कि आप इनकी तरह अगर वक़्त पर काम किया करें यो इतवार का दिन आपके लिए ऐसा मसरूफ़ दिन न हो ।

पत्नी—ऐ, वक़्त पर काम, वक़्त पर काम तो यह होता है कि दस बजे रात को दाढ़ी बनाने का ख़याल आया तो बना डाली नहीं तो बढ़ रही है हफ़्तों । कोई पूछने ही वाला नहीं । सोने आये तो तमाम-तमाम

दिन सो लिये और नहीं सोये तो रात-रात भर ताशों के नज़्र करदी। हद तो यह है कि खाने-पीने का होश नहीं है।

पति—मुझको खाने-पीने तक का होश नहीं है। अरे, अब क्यों मुँह खुलवाओगी तुम? मियाँ अज़ीज़, सुबह की चाय अभी तक नसीब नहीं हुई है।

नन्हीं—क्या सचमुच? क्यों आपा क्या अब तक चाय नहीं दी तुमने?

पत्नी—जरा इनसे यह पूछो कि किस वक़्त सोकर उठे हैं।

अज़ीज़—अगर भाई साहब, आप चाय के वक़्त के बाद सोकर उठे हैं तो आपको शिकायत का कोई हक़ नहीं है।

नन्हीं—नहीं वाह, यह भी कोई बात है? चाय तो हर सूरत में तैयार मिलनी चाहिये थी।

पति—ख़ुदा तुम्हारा भला करे। मगर मैं जो कहूँ साहब तो गुनहगार।

अज़ीज़—ख़ैर, यह आपकी ज्यादती है। आख़िर वह कब तक चाय दम किये बैठी रहतीं आपके लिए? और आपको देर में सोकर उठने का सबक़ आख़िर क्यूँ कर मिलता?

नन्हीं—ख़ैर, रहने दीजिये आपा ऐसे-ऐसे सबक़ अगर मैं देने पर तुल जाती तो आज आप भी यूँ ही फ्रंट होते।

पति—वह तो मैं पहले से ही कहता हूँ कि तुम में और तुम्हारी बहन में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है।

अज़ीज़—मगर साहब मैं इस मामले में बाजी का तरफदार हूँ।

पत्नी—ना भैया, मेरे तरफ़दार बनकर तुम इनसे दुश्मनी क्यों मोल लोगे?

नन्हीं—जनाब देखिये, याद आ गया मुझे। अगर सबक़ ही देना होता तो उस दिन जब रात को बारह बजे……

अज़ीज़—अरे अरे, यह क्या वाहियात है ? यानी हम यहाँ यह झगड़ा देख रहे थे या अपने झगड़े लेकर बैठ गये।

नन्हीं—बनावट की बातें रहने दीजिये अब। सचमुच भाई साहब फ़रिश्ता हैं कि, ग्यारह बजे तक चाय नहीं मिली और चुप हैं। एक आप हैं। ज़रा देर जो चाय में हुई तो कहने लगे कि मैं बाजी ही के यहाँ चाय पियूँगा। मेरा क्या है ऐंठ गये मेरी जूती से। अब पियो यहाँ चाय धरी है।

पत्नी—बड़ी बदतमीज़ हो तुम नन्हीं ! यह मियाँ से बातें हो रहीं हैं। तो क्या भैया तुमने सचमुच चाय नहीं पी ? मैं अभी बनाती हूँ तुम्हारे लिए।

नन्हीं—और मैं दूल्हा भाई आपके लिए एक प्याली बना लाऊँ।

पति—तुम क्यों तकलीफ़ करोगी बेटा। अफ़सोस एक बहन तुम हो और एक——हुँह।

अज़ीज़—मगर मुझको यह उम्मीद न थी कि यह ज़हर तुम यूँ उगलोगी। ख़ैर···

नन्हीं—लो, वह आया तो पहुँच भी गई। तो दूल्हा भाई मैं लाती हूँ चाय।

[जाती है।]

पति—कितनी शरीफ़ लड़की है।

अज़ीज़—क्या अख़लाक़ है बाजी का !

पति—भई, क़िस्सा असल में यह है कि ये दोनों बाअख़लाक़ और शरीफ़ हैं। क़ुसूर हम लोगों का है।

अज़ीज़—नहीं साहब, माननी पड़ेगी आपकी बात कि इतवार कभी हम लोगों को रास नहीं आ सकता।

अज़ीज़—सुबह से यही झक-झक थी घर पर। ग़म ग़लत करने

यहाँ आये चश्मे का बहाना लेकर तो यहाँ भी बेगम साहबा से आख़िर वक़्त न हो सका।

पति—(आवाज़ देकर) अरे छोड़ो चाय। यहाँ सब भाँडा फूट गया।

[दोनों बातें करती हुई आती हैं।]

नन्हीं—सवेरे से यही आफ़त है।

पत्नी—सुबह से यही झगड़ा है।

अज़ीज़—हम दोनों का आज इतवार है।

पति—ये दोनों सगी बहनें हैं।

[दोनों के क़हक़हे]